International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(3): 80-82

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(3): 80-82
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 16-03-2016
Accepted: 17-04-2016

प्रमोद मिश्रा
शोध छात्र, संस्कृत म.गा.चि.ग्रा. विवि.चित्रकूट, सतना, (म.प्र.)

डॉ. प्रज्ञा मिश्रा
विभागाध्यक्ष, संस्कृत म.गा.चि.ग्रा. विवि.चित्रकूट, सतना, (म.प्र.)

Correspondence
प्रमोद मिश्रा
शोध छात्र, संस्कृत म.गा.चि.ग्रा. विवि.चित्रकूट, सतना, (म.प्र.)

लघुकाव्य 'माधवीयम्' का महत्त्व

प्रमोद मिश्रा, डॉ. प्रज्ञा मिश्रा

सारांश
महापुरुषों के जीवन–चरित्र का अध्ययन प्रत्येक मनुष्य के लिए प्रेरणा का स्रोत होता है। आदिकाल से लेकर आज की प्रगत मानव सभ्यता तक सामाजिक और सांस्कृतिक उत्कर्ष के लिए जिन असंख्य महापुरुषों का योगदान रहा है, माधवराव गोलवलकर उनमें से अन्यतम थे। उनका जीवन पूर्णरूप से राष्ट्र को समर्पित था। 'इदं राष्ट्राय इदं न मम' का वैदिक मन्त्र उनके जीवन में साकार और सार्थक था। उनके जीवन–चरित्र को प्रकट करने वाला यह काव्य ग्रन्थ और इसके रचयिता दोनों ही प्रशंसा के पात्र हैं। महाकवि प्रो. मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी ने अपने लघुकाव्य 'माधवीयम्' की भूमिका में ही लिखा है– ''परम पूज्य गुरुजी (माधवराव गोलवलकर जी) का जीवन किसी महाकाव्य से कम नहीं है।'' और ''वैसे तो गुरुजी के जीवन का इतिवृत्त शब्दातीत है किन्तु फिर भी स्वान्तः सुखाय सूर्य के प्रकाश में दीपक जलाना भी क्षम्य होगा ही ऐसा लगता है।''

कूटशब्दः माधवीयम, गोलवलकर, लघुकाव्य

प्रस्तावना
महाकवि के उपर्युक्त कथनों से माधवराव गोलवलकर जी की महानता सिद्ध होती है। महापुरुषों का जन्म किसी महान् उद्देश्य की पूर्ति हेतु होता है तथा बाल्यकाल से ही उनमें महानता के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। किन्तु प्रत्येक महान् सन्तान को जन्म देने में माता– पिता की अहंभूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता है। बिना श्रेष्ठ एवं सद्गुणसम्पन्न माता –पिता के श्रेष्ठ सन्तान का होना कठिन है। माता–पिता के संस्कार और विचार ही पुत्र या पुत्री के रूप में न्यूनाधिक मात्रा में प्रकट होते हैं। इसी सिद्धान्त से माधव के माता–पिता सात्विक स्वभावयुक्त एवं सद्गुण सम्पन्न दम्पती थे। जैसा कि 'माधवीयम्' में बड़े ही स्पष्ट एवं रोचक ढंग से वर्णन किया गया है–

> नित्यं प्रशिक्षणमतिः पठनानुरागी, विद्यानुराधन परो ह्यभयः सदैव।
> लक्ष्मीव चास्य सदने गृहिणी बभूव, लक्ष्मीति रायकर वंशभवा विनीता।।[1]

अर्थात् नित्य पढ़ाने की बुद्धि वाले सदाशिवराव (माधव के पिता) पढ़ने के प्रेमी थे। विद्या की आराधना में लगे हुए सदा निर्भय थे। रायकर वंश में पैदा होने वाली विनम्र स्वभाव से युक्त लक्ष्मी इनके घर में लक्ष्मीदेवी के समान गृहिणी हो गई अर्थात् इनका विवाह लक्ष्मी से हुआ। इसी प्रकार –

> स्वाध्यायधर्मनिरतौ शुभदम्पती च, बालप्रशिक्षणरतौ ययतुः प्रमोदम्।
> छायेव पत्युरनिशं परिसेवमाना, लक्ष्मीगृहे प्रसुषुवे तनयं तृतीयम्।।[2]

अर्थात् स्वाध्याय धर्म में रत कल्याण करने वाले शुभ आचार–विचार वाले दम्पती बालकों को पढ़ाने में लगे रहते थे और आनन्द प्राप्त करते थे। पति की छाया की भाँति सेवा करती हुई लक्ष्मी देवी ने तीसरे पुत्र को जन्म दिया। माधव के जन्म से पूर्व लक्ष्मी देवी विनम्रता से युक्त और सत्यव्रती थीं। वे नागपुर जाकर अपने पिता के घर रहने लगी थीं। गर्भकाल में वे पूरी तरह से रामायण आदि ग्रन्थों के पढ़ने में लगी रहती थीं और धार्मिक क्रिया के आचरण मे निष्ठा से लीन रहती थीं। प्रतिदिन सत्संग में जाती थीं और रात्रि में गुरु चरित्र का स्मरण करती थीं। पति के गुणों और वचनों का विचार करती हुई लक्ष्मी जी माँ के घर रहती हुई सुशोभित होती थीं।[3] माता की ऐसी श्रेष्ठ मनःस्थिति का प्रभाव गर्भस्थ शिशु पर होना स्वाभाविक था।
माता पिता के श्रेष्ठ गुणों के अनुकूल पुत्र के रूप में जन्मा माधव भी उपर्युक्त दैवी गुणों से सम्पन्न था। माधव के जन्म के साथ ही कई विलक्षण घटनाएँ हुईं। जैसे–

जाते सुते स्थिरपदोऽस्य पिता बभूव, सौख्यान्वितं च सदनं ननु मातुलस्य।
श्रुत्वैव संस्मरति मन्त्रगणं स्तुतीश्च, पाठानुवर्तनरतश्च कुशाग्रबुद्धिः।।[4]

अर्थात् पुत्र के पैदा होने पर पिता की नौकरी पक्की हो गयी। मामा के घर में सुख का योग बन गया। माधव बचपन से ही मन्त्रों के समूह और स्तुतियों को श्रवणमात्र से याद कर लेता था तथा पाठों को दोहराने वाला यह कुशाग्र बुद्धि अर्थात् अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धि का बालक था।

बुद्धि की कुशाग्रता के साथ माधव का हृदय भी संस्कारित था। बचपन से ही वह विपद्ग्रस्तों की स्थिति को देखकर उनकी सहायता के लिए तैयार हो जाता था।

व्यायाम में भी माधव की रुचि थी। युवावस्था में वे मल्लविद्या के अभ्यासी थे। मलखम्भ से सम्बन्धित अत्यन्त कठोर व्यायाम में कुशल थे। विद्यालयीन शिक्षा नागपुर से प्राप्त करके माधवराव ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राणिशास्त्र में स्नातक और परास्नातक की उपाधियाँ प्राप्त कीं। काशी में रहते हुए वे कभी नौकाविहार, कभी ध्यान का अभ्यास, कभी रामकृष्णाश्रम में जाकर सेवाकार्य तथा कभी महामना मदन मोहन मालवीय जी की सेवा करते थे। ये सब कार्य माधवजी की काशी–सेवा के अंग थे।

शोधकार्य के लिए वे मद्रास गए। वहाँ मत्स्यालय में कार्यदर्शी हो गए और शोधकार्य पर अच्छी व्यवस्था पर विचार करने लगे। मद्रास नगर में मत्स्यालय के साथियों के साथ वे भी उसके रक्षक थे। मत्स्यालय को देखने आए हुए निजाम को निर्भय होकर उन्होंने शुल्क देने हेतु प्रेरित किया। उनका स्पष्ट मत था कि शुल्कमुक्ति धनहीनों के लिए होनी चाहिए न कि राजाओं के लिए। शोधकार्य पूर्ण करने के पश्चात् वे हिन्दु विश्व विद्यालय काशी में प्राणि विज्ञाान के व्याख्याता पद पर कार्य करने लगे तथा संस्कृत, राजनीति एवं दर्शनशास्त्र का अध्ययन करते करने लगे। इसी बीच उन्होंने विधि की कक्षा में प्रवेश लिया और अधिवक्ता बन गए। इसके पश्चात् न्याय कार्य के साथ–साथ वे राष्ट्रकार्य करते रहे। उन्होंने राष्ट्र हेतु संयमित जीवन व्यतीत करने का संकल्प लेकर विवाह नहीं किया। आध्यात्मिक जिज्ञासा एवं शान्ति के लिए एक दिन वे घर से निकल पड़े और सारगाछी जाकर परमपूज्य स्वामी अखण्डानन्द जी, जो कि स्वामी विवेकानन्द जी के गुरुभाई थे, से गुरुदीक्षा लेकर उनके शिष्य बन गए। स्वामी अखण्डानन्दजी ने उन्हें व्यक्तिगत रूप से साधना करने की अपेक्षा सेवा करने का उपदेश किया। अतः वे अपने गुरुदेव के महाप्रयाण के बाद सेवा करने की भावना से दक्षिणेश्वर भगवान् के दर्शन करके वेल्लूर पहुँचे। वहाँ कुछ समय व्यतीत करने के बाद वे नागपुर लौट आए। रामटेक जाकर उन्होंने अपने माता– पिता के चरणों में प्रणाम किया उस समय उनके नेत्रों में प्रेमाश्रु झलक आए। कुछ दिन रामटेक में व्यतीत करने के पश्चात् वे नागपुर आ गए किन्तु वकालत नहीं की। उन्होंने महत्वपूर्ण पुस्तकों का विद्वत्ता पूर्ण अनुवाद करके सम्मानजनक स्थान प्राप्त किया। अंग्रेजी, हिन्दी व मराठी भाषाओं में उनकी वक्तृत्व शैली अत्यन्त प्रभावपूर्ण व आकर्षक थी। संघ की शाखाओं में जाकर वे अपनी बौद्धिक क्षमता का उपयोग करते हुए स्वयंसेवकों को संघ एवं राष्ट्रकार्य के महत्व को समझाते थे। इस समय वे सारी सांसारिक संगतियों से विरक्त होकर धीर और गम्भीर होकर डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार के मार्गदर्शन में रहते थे तथा संघकार्य के लिए समर्पित थे। डॉ. हेडगेवार राष्ट्रकार्य में लीन तथा भारत माता को परम वैभव के शिखर पर पहुँचाने तथा उसे दासता की बेड़ियों से मुक्त कराने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील थे। उन्होंने इस कार्य के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना सन् 1925 में की थी। संघ का उद्देश्य अपने राष्ट्र को परम वैभव के शिखर तक ले जाने का था जिसके लिए ऐसे सेवाव्रती कार्यकर्ताओं की आवश्यकता थी जो स्वयं प्रेरणा से अपना व्यक्तिगत स्वार्थ त्याग कर समाज और राष्ट्र के लिए कार्य कर सकें। इस महनीय कार्य हेतु अनेकानेक कार्यकर्ताओं की आवश्यकता थी जो देशभक्ति से परिपूर्ण हों तथा अपना जीवन राष्ट्र देवता को समर्पित करके समाज का संगठन करते हुए श्रेष्ठ सद्गुण सम्पन्न, संस्कारवान् एवं चरित्रवान् कार्यकर्ता निर्माण कर सकें। गुरुजी को इस महान् कार्य से जोड़ने के लिए डॉ. हेडगेवार प्रयासरत थे। इसी क्रम में उन्होंने सन् 1948 में नागपुर में आयोजित संघ शिक्षा वर्ग में श्रीगुरुजी माधव सदाशिवराव गोलवलकर जी को वर्ग का सर्वाधिकारी नियुक्त किया था। इसके बाद वे राष्ट्रकार्य में तल्लीन हो गए। इस बीच अधिक प्रवास और श्रम के कारण डॉ. हेडगेवार का स्वास्थ्य अत्यन्त दुर्बल हो गया। इससे उनको रोग हो गया। उनकी आरोग्यता हेतु गुरुजी ने निरन्तर उनकी सेवा की, किन्तु स्वास्थ्य लाभ न हो सका। एकान्त सेवन करके स्वास्थ्य लाभ करने हेतु डॉ. हेडगेवार को नासिक ले जाया गया। श्री गुरुजी भी उनके साथ नासिक जाकर स्नान, शौच और पथ्य की दृष्टि से उनकी सेवा में लग गए। अपने ध्येय के प्रति निष्ठा से एकात्म डॉ. हेडगेवार स्वप्न में भी राष्ट्र पर आए गम्भीर संकटों तथा उनके दूर करने के विषय में बोलते थे। वे शीघ्रातिशीघ्र भारत को एक सशक्त संगठित एवं ज्ञानविज्ञान में अग्रणी राष्ट्र के रूप में देखना चाहते थे जो हर क्षेत्र में विश्व का मार्गदर्शन करने में समर्थ हो। वे कहते थे कि राष्ट्रकार्य के बिना हमारा जीवन व्यर्थ है। उनके जीवन का आदर्श राष्ट्र के लिए मरने का न होकर राष्ट्र के लिए स्वयं को तिल–तिल करके जीने का था। जैसे दीपक तेल की अन्तिम बूँद तक अन्यों को प्रकाश देते हुए जीवित रहता है। उसी प्रकार प्रत्येक देशभक्त को रक्त की अन्तिम बूँद तक राष्ट्रकार्य करते रहना चाहिए। डॉ. साहब ने अपने अन्तिम भाषण में कहा था कि प्रत्येक स्वयंसेवक को जीवन में यह कहने का अवसर नहीं आने देना चाहिए कि मैं कभी संघ का स्वयंसेवक था अर्थात् एक बार स्वयंसेवक बनने के बाद उसे निरन्तर संघ और राष्ट्र कार्य करते रहना चाहिए। श्रीगुरुजी ने उनके इस मन्त्र को पहले से ही हृदय में धारण किया हुआ था और आजीवन उसका निर्वाह किया। डॉ. हेडगेवार की मृत्यु पश्चात् सम्पूर्ण देश में हिन्दु समाज संगठित हो, लोग संस्कारित और चरित्रवान् तथा राष्ट्रभक्त हों तथा संघकार्य का विस्तार समूचे देश में हो इसके लिए श्रीगुरुजी को संघ का सरकार्यवाह घोषित किया गया। इसके पश्चात् गुरुजी ने कलकत्ता जाकर संघकार्य का शुभारम्भ किया। वहाँ संघ की अनेक शाखाएँ प्रारम्भ करके लोगों में प्रसुप्त राष्ट्रभक्ति को जगाते हुए उन्हें संस्कारित, संगठित तथा चरित्रसम्पन्न बनाने का प्रयत्न किया। संघकार्य के द्वारा उन्होंने अनेक तरुणों को संघ तथा राष्ट्रकार्य से जोड़ा। 21 जून सन् 1940 को डा. हेडगेवार जी का निधन हो गया। डॉ. साहब की इच्छानुसार ही श्रीगुरुजी संघ के द्वितीय सरसंघचालक बने। इसके पश्चात् उन्होंने सम्पूर्ण देश में प्रवास करते हुए संघकार्य का विस्तार किया और उनके प्रयत्न से डॉ. हेडगेवार द्वारा आरोपित संघरूपी पौधा विशालवटवृक्ष हो गया।

परमपूज्य श्रीगुरुजी की उपर्युक्त संक्षिप्त जीवनचर्या को देखकर ही ज्ञात होता है कि उनका जीवन राष्ट्र को पूर्णतः समर्पित था। उन्होंने आवश्यकतानुसार अपने व्यक्तिगत स्वार्थों का परित्याग करके अपना जीवन संघकार्य को समर्पित कर दिया था। वे इतने प्रतिभा सम्पन्न थे कि अपने ज्ञान और विवेक से संसार के सभी प्रकार के भोगों को सहज ही प्राप्त करके उनका उपभोग कर सकते थे। किन्तु उनका जीवन राष्ट्र को समर्पित था। उनके जीवन का एक–एक क्षण राष्ट्र सेवा में संलग्न रहा। ऐसे देदीप्यमान नक्षत्र के रूप में उनका स्मरण किया जाता है जो सदियों तक अन्यों को प्रकाश, विवेक, सच्चरित्रता, सदाचार, सादगी एवं आदर्शजीवन तथा देशभक्त एवं पुरुषार्थपूर्ण जीवन जीने की प्रेरणा देता रहेगा। इस प्रकार के महापुरुष के चरित्र को उजागर करने वाला यह लघुकाव्य वास्तव में धन्य है, इसके लेखन से लेखक और लेखनी दोनों धन्य हो गए।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि ''माधवीयम्'' एक लघुकाव्य होते हुए भी महाकाव्य है क्योंकि उसमें जिस महापुरुष का वर्णन किया गया है वह अपने आप में

समुद्र के समान विशालहृदय, उदार एवं अविचलभाव से राष्ट्र की अहर्निश सेवा में संलग्न रहे हैं, उनका जीवन किसी महाकाव्य से कम नहीं है। ऐसे महापुरुषों के जीवनचरित से अन्यों को सदैव प्रेरणा मिलती है और राष्ट्र सामाजिक, राजनैतिक, भौतिक तथा नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से सशक्त और श्रेष्ठतर होता है। अतः उपर्युक्त सभी प्रकार से प्रस्तुत लघुकाव्य महत्त्वपूर्ण है।

सन्दर्भ–सूची

1. ''माधवीयम्'' श्लोक संख्या 12
2. ''माधवीयम्'' श्लोक संख्या 15
3. ''माधवीयम्'' श्लोक संख्या 19
4. ''माधवीयम्'' श्लोक संख्या 27